Purva Mimaansa | Refereed | Peer Reviewed
ISSN: 0976-0237 | Volume 12, Issue March 2021 | Impact Factor 4.115

जीवनी साहित्य की अनुपम कृति –'आवारा मसीहा'

सतीश कुमार भारद्वाज

सहायक प्रोफेसर (हिंदी विभाग), राजकीय कन्या महाविद्यालय, जुंडला - करनाल (हरियाणा)

विष्णु प्रभाकर ने गद्य साहित्य की सभी विधाओं में उत्कृष्ट लेखन किया है। लेकिन उनके कृतित्व का विश्लेषण उनकी अमर कृति 'आवारा मसीहा' के बिना अधूरा है। 'आवारा मसीहा' प्रसिद्ध बंगला लेखक शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की जीवनी है, जो विष्णु जी की सर्वाधिक प्रसिद्ध रचना है और जीवनी साहित्य की सर्वश्रेष्ठ रचनाओं में से एक है। शरतचन्द्र संपूर्ण भारतवर्ष में अत्यंत लोकप्रिय उपन्यासकार रहे हैं, जिनकी प्रायः सभी रचनाओं का अनुवाद हिंदी सहित विभिन्न भाषाओं में हुआ है। परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि उनकी कोई संतोषजनक व प्रामाणिक जीवनी बंगला में भी उपलब्ध नहीं थी। इस चुनौतीपूर्ण कार्य को पूरा करने का बीड़ा विष्णु जी ने उठाया और अपने जीवन के बहुमूल्य चौदह वर्ष देकर इस अमर कृति की रचना की। शरतचंद्र के जीवनवृत पर आधारित ३५४ पृष्ठों की इस जीवनी के लेखन में विष्णु जी के समर्पण का पता इसी तथ्य से चलता है कि उन्होंने इसका लेखन 1959 में प्रारंभ किया था जो 1973 तक चला। उन्होंने इसके छठी बार के ड्राफ्ट को अंतिम रुप दिया था। यह जीवनी प्रथम बार मार्च १९७४ में प्रकाशित हुआ थी। यह उनकी चौदह वर्षो की अथक साधना का ही परिणाम है कि वे शरतचंद्र के प्रामाणिक जीवन का दस्तावेज पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत कर सके हैं। इतनी कठिन साधना विष्णु जी जैसा ही कोई साधक कर सकता है।

'आवारा मसीहा' का प्रकाशन जीवनी साहित्य में एक नई क्रांति लेकर आया और मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इसके लिए विष्णु जी को इंडियन राइटर्स एसोशिएशन द्वारा 1974-75 का 'पाब्लो नेरूदा सम्मान', उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा १९७५-७६ का 'तुलसी पुरस्कार' और 1976 का 'सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार' सहित अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित किया गया।

शरत् साहित्य को पढ़कर उनके जीवन के बारे में जानने की उत्कट इच्छा विष्णु जी को कई बार हुई थी और इसी इच्छा की पूर्ति करने का यह अवसर उन्हें मिला था। 'आवारा मसीहा' का लेखन विष्णु जी के लिए एक चुनौती था। उन्होंने इसकी भूमिका में स्वयं कहा है- 'कभी सोचा भी नहीं था कि एक दिन मुझे अपराजेय कथा-शिल्पी शरतचंद्र की जीवनी लिखनी पड़ेगी। लेकिन अचानक एक ऐसे क्षेत्र से यह प्रस्ताव मेरे पास आया कि स्वीकार करने को बाध्य होना पड़ा। इसका मुख्य कारण था, शरतचंद्र के प्रति मेरी अनुरक्ति। उनके साहित्य को पढ़कर उनके जीवन के बारे में जानने की उत्कट इच्छा कई बार हुई है। शायद वह इच्छा पूरी होने का यह अवसर था। सोचा बंगला साहित्य में निश्चित ही उनकी कई जीवनियाँ प्रकाशित हुई होंगी। लेख-संस्मरण तो न जाने कितने लिखे गए होंगे। वहीं से सामग्री लेकर एक छोटी-सी जीवनी लिखी जा सकेगी। लेकिन खोज करने पर पता लगा की प्रामाणिक तो क्या, सही अर्थो में जिसे जीवनी कहा जा सके, वैसी कोई पुस्तक बंगला भाषा में भी नहीं है।'

यह इसलिए भी चुनौतीपूर्ण था क्योंकि शरत् के जीवन से संबंधित इतने वाद-विवाद प्रचलित थे कि सत्य का अन्वेषण करना एक अत्यंत दुरूह कार्य था। उनके विवादों में घिरे रहने का कारण यह था कि वे अपनी अंतर्मुखी प्रवृत्ति के कारण कभी किसी बात का खंडन नहीं करते थे और अंधविश्वासों व रूढ़िवादिता का विरोध करते थे। विष्णु जी के लिए बंगाली का अच्छा ज्ञान न होना और जीवन में कभी शरतचंद्र से मिलने का अवसर न मिल पाना, इस मार्ग की प्रमुख बाधाएं थी। लेकिन वे अपने पथ से विचलित नहीं हुए और दृढ़ता से आगे बढ़ते रहे। शरतचंद्र की जीवनी लेखन की चुनौती को स्वीकार करने के बाद मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं को पार करते हुए उसे मंजिल तक पहुंचाया। उन्होंने एक कुशल गोताखोर की तरह शरतचंद्र के जीवन-सागर में डुबकी लगाकर 'आवारा मसीहा' रूपी रत्न बाहर निकाला।

उन्होंने शरतचंद्र के जीवन से संबंधित समस्त सामग्री जैसे उनके साहित्य, उनसे जुड़े लोगों और स्थानों आदि का गहन अध्ययन

किया। विष्णु जी के अनुसार- 'मैंने इतना समय इसलिए लगाया है कि मैं भ्रांत और अभ्रांत घटनाओं के पीछे के सत्य को पहचान सकूँ, जिससे घटनाओं से परे जो वास्तविक शरतचंद्र है, उसका रूप पाठकों के सामने प्रस्तुत किया जा सके।' इसीलिए इसे पढ़ते समय उपन्यास जैसा रस तो मिलता है लेकिन इसे कल्पना के आधार पर नहीं बल्कि प्रामाणिकता के आधार पर लिखा गया है। कहा जा सकता है कि 'आवारा मसीहा' में जीवनी और उपन्यास दोनों के तत्व पाए जाते हैं।

शरतचंद्र के संपूर्ण जीवन को एक पुस्तक के रूप में समेटने के लिए उन्होंने सामग्री संकलन के तीन स्रोत बताए हैं- 'एक तो उन व्यक्तियों के साक्षात्कार जो किसी न किसी रूप में शरत् बाबू से संबंधित रहे। दूसरे उनके समकालीन मित्रों के लेख-संस्मरण और तीसरी उनकी अपनी रचनाओं में इधर-उधर बिखरे वे स्थल और प्रसंग जिनका उनके जीवन से सीधा संबंध रहा।' उन्होंने सौ से अधिक व्यक्तियों के साक्षात्कार, पत्र-व्यवहार और वार्तालाप आदि द्वारा शरतचंद्र से संबंधित महत्वपूर्ण सूचनाओं का संकलन किया और पचास के लगभग बंगला भाषा की पुस्तकों का भी गहन अध्ययन किया। इसके लिए सर्वाधिक प्रामाणिक सामग्री स्वयं शरतचंद्र की रचनाओं से ही प्राप्त हुई थी। शरत् के व्यक्तित्व को प्रकट करने के लिए इस जीवनी में लेखक ने अनेक स्थानों पर शरत् के उपन्यासों को आधार बनाया है क्योंकि उनके उपन्यासों में अनेक पात्र व घटनाएँ उनके वास्तविक जीवन से संबन्धित रहे हैं। इस आधार पर कहा जा सकता है कि यह जीवनी शोध-ग्रंथ और सृजनात्मकता दोनों की विशेषताएं लिए हुए एक दुर्लभ रचना है। 'आवारा मसीहा' में शरतचंद्र के व्यक्तिगत और साहित्यिक जीवन का लेखा-जोखा पूरी प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किए जाने के कारण ही उनका संपूर्ण व्यक्तित्व प्रकाशमान हुआ है।

इसके नामकरण के बारे में विष्णु जी ने स्वयं स्पष्ट किया है- 'आवारा मसीहा' नाम को लेकर काफी ऊहापोह मची है। वे-वे अर्थ किए गए जिनकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। मैं तो इस नाम के माध्यम से यही बताना चाहता था कि कैसे एक आवारा लड़का अंत में पीड़ित मानवता का मसीहा बन गया। आवारा और मसीहा दो शब्द हैं। आवारा के सामने दिशा नहीं होती, लेकिन पूरी शक्ति होती है, विल होती है, डिटरमिनेशन होता है, जिस दिन उसे दिशा मिल जाती है, वह मसीहा बन जाता है।' इस नामकरण का आधार शरतचंद्र का ही एक कथन था। उन्होंने मृत्यु-शैया पर कहा था- 'मैंने आवारा लड़के की तरह जिंदगी शुरु की थी। अंत कहाँ किया, यह आप जानें।' विष्णु जी के अनुसार उन्होंने अंत 'मसीहा' के रूप में किया था। शरत् के जीवन में इन दोनों शब्दों को जोड़ने वाली क्षमता दिखाई देती है। इसलिए ये दोनों शब्द एक साथ नया अर्थ देने लगते हैं, जो शरत् के व्यक्तित्व को उजागर करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। 'आवारा' शरत् की अनेक दुर्बलताओं के बावजूद उसे 'मसीहा' प्रमाणित करने में लेखक पूर्णतः सफल हुए हैं। यही इस जीवनी की सबसे बड़ी विशेषता है।

विष्णु जी ने इस जीवनी को तीन पर्वों में विभाजित किया है। तीनों ही पर्वों के साथ 'दिशा' शब्द जुड़ा हुआ है- 'दिशाहारा', 'दिशा की खोज' और 'दिशांत'। प्रथम दो पर्वों के शीर्षक पूर्णतः सार्थक लगते हैं क्योंकि इनमें शरत् के बिखराव, भटकाव और अपने को पाने के प्रयासों का वर्णन हुआ है। इनमें एक भटके हुए नौजवान के एक प्रतिष्ठित लेखक बनने का रोचक ढंग से वर्णन किया गया है। इन तीनों पर्वों में लेखक ने छोटे-छोटे उपशीर्षकों के अंतर्गत शरतचंद्र की कथा को अलग-अलग भागों में बांटा है। 'दिशाहारा' में रंगून जाने से पूर्व का वर्णन है, 'दिशा की खोज' में रंगून के जीवन का और 'दिशांत' में रंगून से स्वदेश लौटने का वर्णन है। इस प्रकार इसमें उनके व्यक्तिगत और साहित्यिक जीवन का एक समग्र चित्र प्रस्तुत करते हुए दिखाया गया है कि किस प्रकार एक आवारा लड़का दिशा मिल जाने पर मसीहा बन जाता है।

प्रथम पर्व 'दिशाहारा' को लेखक ने 18 उपशीर्षकों में विभाजित किया है, जिनमें उनके बचपन से लेकर युवावस्था के आरंभ तक की कहानी है। इसमें ननिहाल में बीते उनके बचपन, किशोर जीवन के उनके साथियों, बाल-विधवा निरूपमा से उनके असफल प्रेम की टीस, साहित्य में उनकी रूचि के आरंभ और साहित्य के क्षेत्र में उनके प्रारंभिक प्रयासों का वर्णन मिलता है। इसके अंतिम शीर्षक 'बंधुहीन, लक्ष्यहीन प्रवास की ओर' में उनके सब ओर से निराश होकर नौकरी की तलाश में बर्मा जाने तक का वर्णन है।

शरत् का जीवन पूरी तरह उपेक्षाओं से भरा था। उनके पास न तो साधन ही थे और न ही सहानुभूति और प्रोत्साहन देने वाला कोई था। उनका बचपन इतना अभावपूर्ण था कि भोजन तक का कोई ठिकाना नहीं था। विलक्षण प्रतिभा के धनी होते हुए भी अर्थाभाव के कारण

PURVA MIMAANSA

मैट्रिक की परीक्षा भी नहीं दे सके। माँ की मृत्यु ने तो उन्हें घोर निराशा में डुबो दिया था। लेकिन फिर भी उन्होंने जीवन से हार नहीं मानी और अपने आक्रोश और आशाओं को अपने साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्ति दी। साहित्य-सृजन उन्हें विरासत में मिला था। अपने पिता की अधूरी रचनाओं को पढ़कर वह सोचते थे कि उन्होंने इन रचनाओं को पूरा क्यों नहीं किया होगा? उन्होंने इन्हें पूरा करने का असफल प्रयास भी किया। इस प्रयास ने उन्हें साहित्य-सृजन और जीवन में अथक संघर्ष करने की प्रेरणा दी।

इस पर्व में शरत् के बचपन, युवावस्था और यौवन के असफल प्रेम के साथ-साथ उनके संपर्क में आए कुछ महत्वपूर्ण लोगों का परिचय भी दिया गया है। इसी में उनकी शिक्षा-दीक्षा और साहित्य-सृजन के प्रारंभ का भी उल्लेख हुआ है। अपने माता-पिता की मृत्यु के बाद जीविकोपार्जन के लिए उनके भारत छोड़कर रंगून चले जाने के विवरण से यह पर्व समाप्त हो जाता है। इस प्रकार 'दिशाहारा' में शरत् की 26 वर्ष की आयु तक का संपूर्ण विवरण लेखक ने प्रस्तुत किया है।

दूसरे पर्व 'दिशा की खोज' में शरत् के बर्मा के लंबे प्रवास की कथा का 18 उपशीर्षकों में विस्तृत वर्णन हुआ है। रंगून जाते समय उनकी कोई दिशा निश्चित नहीं थी। उनकी 'दिशा की खोज' का ही विस्तृत वर्णन इसमें हुआ है। इसमें शरत् के व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन की परिस्थितियों का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने उनके अभावग्रस्त जीवन को अत्यंत सूक्ष्मता से चित्रित किया है। शांति से उनके परिचय और गृहस्थ जीवन के प्रारम्भ तथा अल्पकालिक दांपत्य जीवन के बाद शांति की मृत्यु से पैदा हुए शरत् के अकेलेपन का वर्णन हुआ है। लेकिन संकट की यह घड़ी अंततः उसे पुनः अध्ययन और लेखन के लिए प्रेरित करती है।इसके बाद उनके मोक्षदा के साथ विवाह करके गृहस्थ जीवन का प्रारंभ करने का वर्णन है, जिसका नाम बाद में हिरण्यमयी हो गया था। लेखक ने उनके गृहस्थ जीवन और लोगों से मेलजोल के प्रयासों का अत्यंत सूक्ष्मता से विश्लेषण किया है।

दूसरे पर्व में शरत् के साहित्यिक जीवन का शुभारंभ होता है। जीविकोपार्जन के लिए एक तरफ वे नौकरी करते रहे और दूसरी तरफ उनका साहित्य-सृजन भी निरंतर चलता रहा। रंगून रहते हुए उनका कलकत्ता से संपर्क निरंतर बना रहा और वे बीच-बीच में कलकत्ता भी आते-जाते रहे। रंगून में रहते हुए उन्होंने अपनी कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण रचनाओं का सृजन किया। वहीं रहकर उन्होंने 'चरित्रहीन' जैसी अमर रचना का सृजन भी किया था। इसके अलावा उनके कुछ अन्य महत्वपूर्ण उपन्यासों जैसे 'श्रीकांत', 'शुभदा', 'गृहदाह', 'बिराज बहू' आदि का सृजन भी वहीं हुआ। इसके अलावा कई महत्वपूर्ण कहानियां और निबंध भी वहीं लिखे गए। उनके द्वारा रचित इस सम्पूर्ण साहित्य का मूल स्वर नारी-उद्धार ही रहा है।

इसी दौरान शरत् का संपर्क अनेक मित्रों, साहित्यकारों, प्रकाशकों और संपादकों से हुआ, जिनके साथ वह साहित्य-चर्चा भी करते थे और अनेक साहित्यिक आंदोलनों में भाग भी लेते थे। बर्मा के लंबे प्रवास में उनकी साहित्यिक उपलब्धियों ने उन्हें एक लेखक के रूप में प्रतिष्ठित करके उनमें एक विजयी राजकुमार का साहस भर दिया था। इससे उनकी 'दिशा की खोज' समाप्त हुई और अंत में एक प्रतिष्ठित साहित्यकार के रूप में मजबूत कदमों के साथ एक निश्चित दिशा में आगे बढ़ने के उद्देश्य से प्रेरित होकर स्वदेश वापसी का मार्ग प्रशस्त हुआ। इस प्रकार 'दिशा की खोज' के अंतर्गत उनके बर्मा प्रवास का विस्तृत वर्णन करते हुए लेखक ने उनके व्यक्तित्व और साहित्यिक जीवन की परिस्थितियों को प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है।

जीवनी के तीसरे और अंतिम पर्व 'दिशांत' में एक प्रतिष्ठित व लोकप्रिय साहित्यकार के जीवन की कथा का वर्णन है। प्रथम दो पर्वों में शरत् के जीवन के भटकाव को प्रस्तुत किया गया है और तीसरे पर्व में एक प्रतिष्ठित साहित्यकार के जीवन को अभिव्यक्त किया गया है, जो अपने पाठकों के बीच अत्यंत लोकप्रिय था और प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँच चुका था। कहा जा सकता है कि प्रथम दो पर्वों में उनके 'आवारा' जीवन और तीसरे पर्व में 'मसीहा' बनने का वर्णन हुआ है। इसमें उनकी रचनाओं के लेखन और प्रकाशन के विवरण अधिक होने से रोचकता कुछ कम हुई है। पूर्ववर्ती पर्वों को पढ़ते समय पाठक को उपन्यास जैसा आनंद मिलता है, लेकिन यह पर्व थोड़ा उबाऊ है क्योंकि इसमें तथ्यात्मक विवरणों की अधिकता है। इसमें उनके साहित्यिक जीवन के विवादों, साहित्यिक आंदोलनों में सक्रियता और राजनीतिक

PURVA MIMAANSA

गतिविधियों को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

यह पर्व पूर्ववर्ती दोनों पर्वों से बड़ा है जिसमें ३० उपशीर्षकों का सृजन करके शरत् के जीवन के विविध पक्षों को प्रकट किया गया है। जिस समय शरत् ने कलकत्ता छोड़कर रंगून की राह ली थी, उस समय वे तिरस्कृत, उपेक्षित और साधनहीन थे। लेकिन तेरह वर्ष बाद कलकत्ता लौटते समय वह एक ख्यातिप्राप्त कथा-शिल्पी के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे। इसे उनके जीवन का स्वर्णयुग भी कहा जा सकता है क्योंकि उस समय उनकी रचनाएं संपूर्ण बंगाल में छा चुकी थी।

'आवारा मसीहा' की ख्याति का कारण शरत् और विष्णु प्रभाकर दोनों ही हैं। इस जीवनी से पहले कल्पना के आधार पर बंगला में शरत् की कुछ जीवनियाँ लिखी गई थी, जिनमें से कोई भी प्रामाणिक नहीं थी। बंगला भाषी न होने के बावजूद भी अपनी निष्ठा, दृढ़-संकल्प और कड़ी मेहनत से विष्णु जी ने उनकी प्रामाणिक जीवनी को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। इसमें कहीं भी कल्पना का प्रयोग नहीं किया गया है, बल्कि पूरे शोध के बाद प्रामाणिक तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं।

इसकी भाषा भी अत्यंत सहज और स्वाभाविक है जो अपने आप निर्मित हुई है। इसमें भावुकता के स्पर्श के साथ-साथ शरत् के प्रति श्रद्धा भी सर्वत्र विद्यमान है। लेखक ने विवादास्पद स्थलों का भी पूर्ण ईमानदारी से चित्रण किया है। उन्होंने इसकी भूमिका में कहा है- 'मैं नहीं जानता कि 'आवारा मसीहा' इस कसौटी पर कितना खरा उतरेगा। किंतु एक बात पूरे विश्वास से कही जा सकती है कि मैंने कला को भले ही खोया हो, आस्था को एक क्षण के लिए भी नहीं खोया और निरंतर सशक्त और सच्ची संवेदना की घड़ियों को खोजने का प्रयत्न किया है।' इससे स्पष्ट है कि इस जीवनी के लेखन में उन्होंने कला को उतना महत्व नहीं दिया है जितना आस्था को।

विष्णु जी की तटस्थता ने शरत् के जीवन के रहस्यमय एवं परस्पर विरोधी आयामों के सत्यान्वेषण में भी सफलता पाई है। उनके मन में शरत् के प्रति श्रद्धा है, अंधभक्ति नहीं। इसी कारण भावातिरेक के स्थान पर उनका नीर-क्षीर विवेक इसे प्रामाणिकता प्रदान करता है। लेखक के अनुसार- 'मैंने शरत् का आंतरिक और बाह्य स्वरूप बहुत ही निरपेक्ष तरीके से पाठकों के सामने रख दिया है। मैंने उनकी बुराइयों को छिपाया नहीं है। शरत् बहुत सताया गया था। वह निराला की तरह मनमौजी था।' स्पष्ट है उन्होंने अपने निष्कर्षों को शरत् पर लादा नहीं और न ही उनकी मानवीय दुर्बलताओं को छिपाया है, बल्कि शरत् को शरत् के रूप में खोजने का सफल प्रयास किया है।

'आवारा मसीहा' का महत्व इस बात में भी है कि शरत् के चरित्र को कलंकित करने के उद्देश्य से बंगाल के सस्ते किस्म के कुछ लेखकों द्वारा कुछ सनसनीप्रिय जीवनियाँ लिखी गई थी, जो बड़ी तेजी से फैलती जा रही थी। विष्णु जी ने अपने चौदह वर्षों की कड़ी मेहनत से इन जीवनियों के विरुद्ध एक चट्टानी दीवार खड़ी कर दी और अपनी सत्यनिष्ठा और दृढ़ इच्छाशक्ति से शरत् की अंतरात्मा को यथार्थ रूप में पकड़कर उसे पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया, विशेषकर उस लेखक की आत्मा को जिसने सारा जीवन अपने जीवन के रहस्यों को छिपाने में बिता दिया। उन्होंने बंगला भाषा के साहित्यकार को हिंदी जगत के निकट लाकर दोनों के बीच की दूरी को भी पाट दिया। इस प्रकार शरत् के चरित्र और साहित्यिक जीवन को दिव्यता प्रदान कर उसे अमर कर दिया, जिसकी वजह से 'आवारा मसीहा' हिंदी जीवनी साहित्य की एक अमर कृति बन गई।

जीवनी साहित्य में 'आवारा मसीहा' को जितना गौरव प्राप्त हुआ है, उतना हिंदी की किसी अन्य जीवनी को नहीं मिला। डॉ. विजयेंद्र स्नातक के अनुसार- 'विष्णु जी की अक्षय कीर्ति का स्तंभ है उनकी अमर कृति 'आवारा मसीहा'। हिंदी के जीवनी साहित्य की यह मूर्धन्य कोटि की रचना है। कहना न होगा कि जीवनी लेखन का यह मानदंड है। भारत की किसी अन्य भाषा में भी ऐसी प्राणवंत, प्रामाणिक और प्रेरणाप्रद जीवनी उपलब्ध नहीं है।'

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रचनात्मकता की दृष्टि से हिंदी में जीवनियों की संख्या सीमित ही है। इनमें अमृतराय की 'कलम का सिपाही' और विष्णु प्रभाकर की 'आवारा मसीहा' विशेष उल्लेखनीय हैं। यदि 'आवारा मसीहा' को जीवनी विधा का गौरव-ग्रंथ कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि इसमें जीवनी, उपन्यास, संस्मरण, रेखाचित्र, कहानी आदि अनेक साहित्यिक विधाओं का एक उत्कृष्ट समन्वय दिखाई देता है। यद्यपि विष्णु जी को साहित्य अकादमी पुरस्कार 'अर्द्धनारीश्वर' उपन्यास के लिए मिला है,

PURVA MIMAANSA

लेकिन उनकी कीर्ति का आधार-स्तंभ तो 'आवारा मसीहा' ही है। स्वयं लेखक ने भी इसे अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना मानते हुए कहा है- 'अपराजेय कथा-शिल्पी शरतचंद्र की यह जीवनी 'आवारा मसीहा' निश्चय ही पठनीय ग्रंथ है।' यह एक ऐसी कृति है जो वर्षों तक विष्णु जी की कीर्ति को बनाए रखेगी।

संदर्भ सूची

प्रभाकर, विष्णु. (2018). आवारा मसीहा. नई दिल्ली : राजपाल एंड संस.

रस्तोगी, डॉ. सुभाष. (2003). विष्णु प्रभाकर का साहित्य. पंचकुला: हरियाणा साहित्य अकादमी.

मनु, प्रकाश. (2017). विष्णु प्रभाकर (भारतीय साहित्य के निर्माता). नई दिल्ली : साहित्य अकादमी.

सिंह, डॉ. महीप. (2009). विष्णु प्रभाकर : व्यक्तित्व और साहित्य. नई दिल्ली : अभिव्यंजना प्रकाशन.

मलिक, माया. आवारा मसीहा : जीवनी के निकष पर. दिल्ली: जीवन ज्योति प्रकाशन.

नायडू , डॉ. राजलक्ष्मी. (1991). विष्णु प्रभाकर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व. कानपुर : विकास प्रकाशन.

चौधरी, जगन्नाथ. (1988). आवारा मसीहा : सृजन एवं मूल्याँकन. कानपुर : अनुभव प्रकाशन.

तिवारी, रामचंद्र. (2014). हिंदी का गद्य साहित्य. वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन.

तिवारी, विश्वनाथ प्रसाद. (1996). गद्य के प्रतिमान. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन.

गुप्त, धर्मेन्द्र . (1987). साहित्य में भारतीय अस्मिता की पहचान : विष्णु प्रभाकर. दिल्ली : पीयूषम प्रकाशन.

डॉ. नगेंद्र एवं डॉ. हरदयाल. (2019). हिंदी साहित्य का इतिहास. नोएडा: मयूर पेपरबैक्स.

PURVA MIMAANSA